पुरुष एवं प्रकृति भेद

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

पुरुष चेतन तत्व है। पुरुष को आत्मा कहते हैं। प्रकृति जड़ है। सांख्यदर्शन में पुरुष और प्रकृति के रूप में दो तत्वों को मान्यता प्राप्त है। पुरुष अपरिणामी है, प्रकृति परिणामी है। प्रकृति और उसके परिणामस्वरूप तत्व मिलकर कुल चौबीस होते हैं। सांख्य का पच्चीसवां तत्व है पुरुष। पुरुष चैतन्य स्वरूप, निष्क्रिय और निर्गुण है। प्रकृति में बुद्धि, अंहकार, ज्ञान आदि क्रियाएं होती हैं। बुद्धि में होने वाला सुख–दुख आदि अविवेक के कारण पुरुष अपना मान लेता है। यह मान लेना ही बंधन है। अज्ञान से छुटकारा पाना ही मुक्ति है। पुरुष में न बंधन होता है और न मोक्ष। पुरुष का पुनर्जन्म भी नहीं होता। पुनर्जन्म या देहान्तर प्राप्ति लिंग शरीर की होती है। लिंग शरीर अठारह तत्वों का बना हुआ है। अठारह तत्वों में बुद्धि, अहंकार, पांच कर्मेन्द्रि, पॉच ज्ञानेन्द्रि और मन की गणना होती है। इसके अतिरिक्त पांच तन्मात्राएं हैं। इस प्रकार ये सब प्रकृति के परिणाम हैं। पुरुष अपरिणामी है। सभी गुण प्रकृति में रहते हैं। पुरुष निर्गुण है।

सांख्यदर्शन किसी सृष्टिकर्ता ईश्वर को नहीं मानता। पुरुष की सन्निधि मात्र से प्रकृति की साम्यावस्था का भंग और उससे परिणाम द्वारा तत्वों की सृष्टि होती है। पुरुष और प्रकृति का सम्बन्ध लंगड़े अन्धे के समान है। निष्क्रिय होने से पुरुष लंगड़ा या गतिहीन है उसी प्रकर प्रकृति अचेतन या अन्धी है। दोनों के मिल जाने से संसार बनता है। प्रकृति का उद्देश्य है पुरुष द्वारा देखा जाना और पुरुष का अर्थ है कैवल्य। परस्पर दोनों एक–दूसरे का उद्देश्य पूरा करते हैं। जैसे ज्ञान या चेतना शून्य दूध बछड़े के पोषण के लिए गाय के शरीर से प्रस्रवित होता है वैसे ही ज्ञानशून्य अचेतन प्रकृति की विकृति पुरुष की मुक्ति के लिए है। पुरुष का विशेष सम्पर्क बुद्धि से रहता है। ग्यारह इन्द्रियां अहंकार और बुद्धि मिलकर तेरहकरण बनती हैं। इनमें मन और अहंकार सहित बुद्धि जो समस्त विषयों का अवगाहन करती है मुख्य है, अन्य इन्द्रियां अप्रधान हैं।

बुद्धि, अहंकार और मन की अपेक्षा से प्रधान है। बुद्धि बहुत सूक्ष्म है। पुरुष की छांया उसके चैतन्य के आवेश को ग्रहण करती है। जैसे स्फटिक, पत्थर समीप रखे हुए जपाकुसुम के रंग को ग्रहण कर लेता है वैसे ही बुद्धि पुरुष चैतन्य की छांया ग्रहण करके पुरुष जैसी बन जाती है। ऐसी बुद्धि पुरुष के भोग को उत्पन्न या दर्शित करती है। बुद्धि के माध्यम से पुरुष त्रिगुणात्मक जगत से भोक्ता के रूप में सम्बन्द्ध होता है। बुद्धि ही प्रकृति और पुरुष के भेद को पुरुष से साधती है। पुरुष और प्रकृति दोनों भिन्न तत्व हैं। पुरुष का बंधन और मोक्ष दोनों अवास्तविक है। यह अविवेक कल्पित है। पुरुष और लिंग शरीर अथवा पुरुष और बुद्धि का सम्बन्ध देशकाल में घटित होने वाला संयोग नहीं है। बुद्धि और पुरुष के बीच और प्रकृति और पुरुष के बीच भी एक प्रकार पूर्व स्थापित सामंजस्य पाया जाता है। जिसके कारण वो एक–दूसरे का उपकार करते हैं। यह संयोग अविद्या के कारण होता है। अविद्या को विपर्यय ज्ञान की वासना से समीकृत किया गया है। सांख्यदर्शन में पुरुष को असंग माना गया है। दूसरी तरफ पुरुष और प्रकृति और पुरुष और बुद्धि के बीच सम्बन्ध भी देखा गया है। अविद्या बुद्धि की ही वृद्धि है। आत्मा का सम्बन्ध अनात्मा या प्रकृति से अध्यास के कारण होता है। अध्यास अविद्याजन्य है।

पुरुष के संयोग से अचेतन लिंग शरीर भी चेतनायुक्त जान पड़ता है। कर्तापन प्रकृति के गुणों में है। उदासीन पुरुष अविद्या के कारण प्रकृति के कार्यों को अपना मान लेता है। भगवत् गीता में कहा गया है कि सम्पूर्ण कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते हैं। परन्तु अहंकार से विमूढ़ चित्त वाला पुरुष मैं करता हूं ऐसा मान लेता है। वास्तव में सांख्यदर्शन में बंधन, मोक्ष और पुनर्जन्म पुरुष के नहीं होते। विभिन्न पुरुषों से सम्पृक्त प्रकृति ही पुनर्जन्म बंधन और मोक्ष की भागिनी होती है। बंधन, मोक्ष और संसार पुरुष में आरोपित किये जाते हैं। वे पुरुष में दिखाई देते है। परन्तु वास्तव में होते नहीं। पुरुष और प्रकृति क संयोग से ही सृष्टि होती है। सृष्टि से पहले प्रकृति के तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैं। साम्यावस्था के भंग का ही नाम सृष्टि है। वैषम्य या विषमता जगत के मूल में वर्तमान है।

जैन दर्शन में जीव और अजीव के रूप में पुरुष और प्रकृति की कल्पना की गयी है। पुरुष जीव है और प्रकृति अजीव है। इन्हीं दो तत्वों से संसार की रचना है। मानव का अस्तित्व शरीर के पीछे नहीं है। हमारा अस्तित्व आत्मा पर निर्भर है। जो दर्शन कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं वह आत्मा पर भी विश्वास करते है। चार्वाक दर्शन आत्मा पर विश्वास नहीं करता। उसका मानना है कि शरीर के साथ–साथ चेतना भी नष्ट हो जाती है। चार्वाक दर्शन चेतना को भी पंचभूतों से उत्पन्न मानता है। उसका कहना है कि जैसे विभिन्न प्रकार के भौतिक पदार्थों के संयोग से शराब में मादकता उत्पन्न हो जाती है वैसे ही भौतिक पदार्थों के संयोग से चेतना की उत्पत्ति हो जाती है, किन्तु ऐसी बात नहीं है। जैनदर्शन का आत्मवाद के सिद्धान्त को मानता है। जैनदर्शन के अनुसार आत्मा शरीरव्यापी है। चींटी के शरीर में आत्मा और हाथी के शरीर में व्याप्त आत्मा शरीर के अनुसार सिकुड़ती और फैलती रहती है। यह विश्व छह द्रव्यों की रचना है।